चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
6

छतरपूर मैं शङ्करलाल जी का एक छोटा सा मकान था। लेकिन उसके पिछवाड़े की बाड़ी काफी बड़ी थी। उस बाड़ी में बहुत से छोटे-मोटे टीले बन गए थे और चारों ओर तरह-तरह की कँटीली झाड़ियाँ उग आई थीं। अचानक देखने से एक छोटा मोटा जङ्गल सा लगता था। यहाँ तक कि दिन में भी उन झाड़ियों के नीचे अन्धेरा ही छाया रहता था। फिर उस बाड़ी में विषैले जीव-जन्तु आराम से विचरने लगे तो इसमें आश्चर्य की कौन सी बात ? हितैषी पड़ोसियों ने बार बार शङ्करलाल जी से कहा- "भाई शङ्कर ! बाड़ी में बाल बचे घूमते-फिरते हैं। इसलिए रुपए का लोभ न करके तुरन्त बाड़ी को साफ करा दो। खाई खड़ों को पटवा दो ! दीवारों की मरम्मत करा दो। पीछे पछताने से क्या फायदा होगा ! लेकिन शङ्करलाल ने सुनी-अनसुनी कर दी। आखिर पड़ोसी चुप हो गए। एक दिन शङ्करलाल के घर में सभी लोग खाने बैठे। उसी समय पानी की मोरी में से एक छोटा मेण्ढक लम्बी छलाँगे भरता अन्दर आ गया। बच्चे उसका समाशा देखने लगे। इतने में उसी मोरी में से एक सोप भी अन्दर आ गया। उसने पल भर में मेण्ढक को पकड़ लिया। बस; परोसा हुआ हुआ खाना छोड़ कर घर के सभी लोग उठ भागे। सब लोग तो भाग कर बाहर चले गए; लेकिन शङ्करलाल कमरे के बाहर से झाँक कर देखने लगे कि साँप क्या करता है। उस कमरे में साँप के लिए शायद कोई दूसरा रास्ता न था। इसलिए वह

मेंढक को पकड़ कर जिस रास्ते से आया था उसी से चला गया। शङ्करलाल ने उसका पीछा किया। उन्होंने देखा कि यह बाड़ी में जाकर दीवार की एक दरार में घुस गया। इतने में बच्चे बाहर जाकर हल्ला मचाने लगे और दस-बीस आदमी आकर जमा हो गए। "भाई ! तुम लोग यहीं पहरा देते रहो! साँप कही बाहर न आ जाए। मैं अभी जाकर सपेरे को बुला लाता हूँ।" यह कह कर शङ्करलाल तुरन्त बेचू सपेरा के घर बले। वह गाँव के बाहर एक छोटी सी झोपड़ी में रहता था। शङ्करलाल के सौभाग्य से आज वह घर पर ही था। 'बेचू! आ जल्दी। हमारी जान पर आ बनी है। बड़ा भारी साँप आ गया है हमारे घर में।" शङ्करलाल ने हाँफते हुए कहा।

"बाबूजी ! घबराइए नहीं। मेरे होते आपको डर किस बात का ?हाँ, यह बताइए कि वह कौन सा साँप है। उसके बदन पर धारियाँ है कि नहीं है!" बेचू सपेरा अनेको सवाल करने लगा। "समय बर्बाद मत करो। जल्दी चलो !" शङ्करलाल ने उतावली के साथ कहा। "कहने का मतलब है कि बाबूजी में तुम्बी बजाऊँगा। मन्तर-तन्तर करूँगा। तब साँप बाहर आएँगे। जितने साँप बाहर आएँगे उतनी चवन्नियाँ लूँगा। अगर यह सब करने पर भी आपका बताया साँप बाहर नहीं निकला तो एक ही चवन्नी दीजिएगा, बस।" बेचू सपेरे ने कहा। शङ्करलाल ने साँप को अच्छी तरह पहचान लिया था। इसलिए उन्हें उसकी निशानियाँ याद थीं। अब वे

सोचने लगे कि न जाने, बेचू के तुम्बी बजाने पर कितने साँप बाहर आएँगे और उसे कितनी चवन्नियाँ देनी पड़ेगी। अगर उनका देखा साँप बाहर नहीं आया तो ? इस उधेड़-बुन में पड़े कुछ देर तक वे किसी निश्चय पर न आ सके। लेकिन आखिर उन्होंने बेचू के सामने अपने देखे हुए साँप का वर्णन करके बताया।

तुरन्त बेचू उनके साथ चला। उनके घर जाकर उसने तूम्बी बजाई। तुरन्त छः सात काले साप बाहर निकल आए। लेकिन उनमें शङ्करलाल का बताया साँप नहीं था। बेचू ने उन साँपों को पकड़ कर अपनी टोकरी में बन्द कर किया और फिर तूम्बी बजाई। लेकिन उसके लाख कोशिश करने पर भी शङ्करलाल का बताया हुआ साँप बाहर नहीं आया। तब शङ्करलाल को बहुत खुशी होने लगी कि एक चवन्नी देने से उनका पिण्ड छूट जाएगा ! उन्होंने बेचू को एक चवन्नी देकर जाने को कहा। "तीन बरस से साँप पकड़ना ही मेरा पेशा है। लेकिन कभी मेरी कोशिश बेकार नहीं गई। इस बार ऐसा क्यों हुआ ?" बेचू ने सोचा। आखिर उसने सोचा
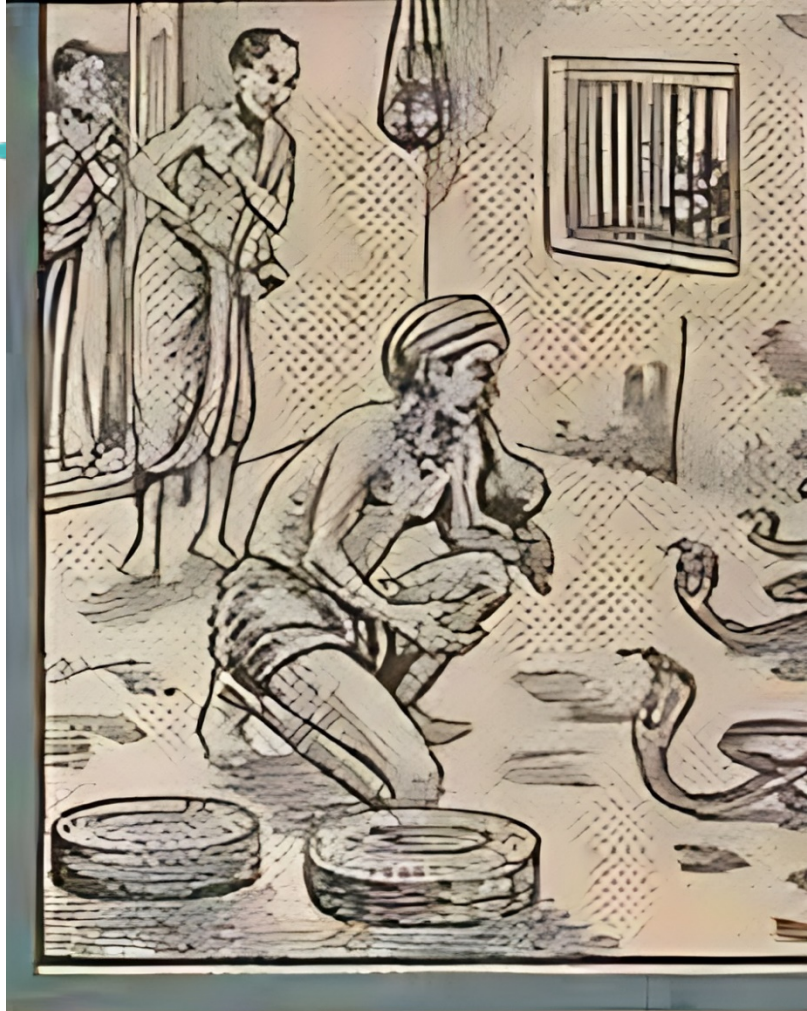
कि शङ्करलाल ने ही पैसा बचाने के लिए यह चाल चली है। वे ही झूठ बोल रहे हैं।

आखिर चवन्नी लेकर जाते वक्त बेचू ने शङ्करलाल से कहा-"तुमने मुझे धोखा दिया है। इसका नतीजा अच्छा न होगा। तुम सोचते होंगे कि साँपों में समझ नहीं है। लेकिन सुन लो ! उनके बारे में झूठ बोल कर किसी ने फायदा नहीं उठाया। हमारे साँप कभी धोखेबाजों को माफ नहीं करते। वे अपकार को भूलते भी नहीं। तुम थोड़े ही दिनों में अपने पाप का फल भोगोगे!" यह कह कर वह गुस्से

में चला गया। "जा! बच्चू ! हमने ऐसे बहुतेरे देखे हैं।" शङ्करलाल ने मन में कहा। लेकिन दूसरे दिन शङ्करलाल के घरवालों ने देखा कि दो काले साप फुफकारते हुए वेग से आकर उनकी बाड़ी में फन उठा कर नाच रहे हैं। यह देख कर उनकी घबराहट का ठिकाना न रहा। अब किया जाय ! आखिर शङ्करलाल वाकर बेचू के पास गिगिड़ाने लगे। "अभी मुझे एक और जगह जाना है। वहाँ मुझे पाँच रुपये मिलेंगे। मैं अभी नहीं आ सकता।" बेचू ने मुँह फुला कर कहा।आखिर शङ्करलाल ने उसे पाँच रुए दिए और बड़ी आरजू मिन्नत करके उसे अपने घर ले आए। बेचू ने आकर उन साँपों को पकड़ लिया। इसके एक हफ्ते बाद शङ्करलाल के दोस्त रामचरण उनके घर आए। तब घरवालों ने साँपों का बृतान्त जो अभी अभी उनकी याद में ताजा था, उनसे कह सुनाया। सारी कहानी ध्यान से सुनने के बाद रामचरण ठहाका मार कर हँसने लगे। शङ्करलाल की समझ में न आया कि वे क्यों हैंस रहे हैं। आखिर रामचरण ने कहा-"शङ्करलाल ! तुम बिलकुल भोले मालूम होते हो। इसने दिनों से यहाँ रह कर भी बेचू सपेरा का रहस्य नहीं जाना तुमने ! सुनो ! वह जितना रुपया माँगता है उतना कुछ लोग नहीं देते। तब वह उनकी बाड़ियों में अपने पालतू साँप छोड़ देता है। शायद तुम नहीं जानते हो ! उन सबका जहर पहले ही निकाल लिया जाता है ! इसलिए उनके डसने पर भी कोई खतरा नहीं। फिर भी उन्हें देखकर लोग डर ही जाते हैं। क्या तुमसे भी बेचू का झगड़ा हुआ था क्या !" यह कह कर उन्होंने शङ्करलाल की खिल्ली उड़ाई। शङ्करलाल उनकी बात सुन कर बहुत शरमा गए। उन्होंने तुरन्त बात बदल डाली।

हम पहले ही कह चुके हैं कि निशीथ और प्रदोष को दिन में नहीं दिखाई देता था। तिस पर वे अब दाढ़ी वाले बोने की माया में फँसे हुए थे। इसलिए वे उदय के बौने वन जाने और बौने के मामूली आदमी बन कर चारपाई पर लेटने की बात नहीं जान सके। वे बहुत घबरा रहे थे कि दाढ़ी वाला न जाने कब जाग उठेगा और कब उनकी जान पर आ बनेगी। फिर उदय की चिन्ता भी थी ! इधर उदय खुश हो रहा था कि दाढ़ी वाले बौने का सारा रहस्य उसे मालूम हो गया। इतना ही नहीं, वह चकमा देकर खुद दाढ़ी वाला बन गया। इस खुशी में उदय अपने भाइयों की बात ही मूल गया था।

अब तो उसका सारा ध्यान उन अञ्जनों पर लगा था जो उसकी जेब में थे। वह सोच रहा था कि वह उन बुकनियों और अञ्जनों का क्या उपयोग कर सकता है कि इतने में उसे अपने भाइयों की याद आ गई। उसने चारों ओर नजर फेरी कि वे कहाँ है। उसे कुछ नहीं सूझा। वह कुछ सोचते हुए वहाँ चहल कदमी करने लगा। इतने

में बौने की नींद टूट गई। उसने देखा कि सामने ठीक उसी का सा रूप बना कर उदय खड़ा है। हाँ, उसका एक हाथ गायब है। तब सारी बात उसकी समझ में आ गई। उसे बहुत गुस्सा आया कि उसका सारा भाण्डा फूट गया। लेकिन ऊपर से उसने कुछ न दिखाया। "आप बड़े ही बहादुर मालूम होते हैं। मुझे बड़ी खुशी हो रही है कि मात्र इतने दिन बाद ऐसे चतुर वीर दिखाई दिए जो बात की बात में मेरा रहस्य जान गए। लेकिन इससे आपको कोई फायदा न होगा। अगर आप मुझे बता दें कि किस काम पर निकले हैं तो मैं ही वह काम कर दूँगा। मेरे रहते माप बेकार कष्ट क्यों उठाएँ ?" उदय के नजदीक आकर उसने कहा और गिड़गिड़ा कर उसके गले की माला माँगने लगा। लेकिन उदय क्यों उसकी चाल में आने लगा ? उसने कहा-"पहले बता दो कि मेरे भाइयों को कहाँ छिपा रखा है। पीछे बातें होती रहेंगी।" "मैंने उन्हें कहीं नहीं छिपाया है। वे यहीं हैं। तुम्हें विश्वास न हो तो अपनी बाई जेव से बुकनी की डिबिया निकाल कर यहाँ छिड़क कर देखो।" यह कह कर उसने एक जगह बतलाई।

उदय ने बुकनी निकाल कर बताई हुई जगह पर छिड़क दी। तुरन्त उसे निशीथ और प्रदोष दिखाई दिए। "हाँ, अब बताओ कि मेरा हाथ जो गायब हो गया है फिर से कैसे मिलेगा !" उदय ने बौने से पूछा। "उसकी दवा भी तुम्हारे ही पास है। अपनी दाई जेब से हरे अञ्जन की डिबिया निकाल लो। थोड़ा सा अञ्जन अपनी बाँह पर मल लो !" दाढ़ी वाले ने कहा। उदय ने वैसे ही किया।

तुरन्त उसका हाथ फिर उसे मिल गया। तब उसने सोचा-"अब मुझे जान लेना चाहिए कि मेरी जेब में जो सफेद बुकनी और हरा अञ्जन है वे किस काम आते हैं। उसने उन्हें दाढ़ी वाले को दिखा कर पूछा। "क्या तुम इतना भी नहीं जान सके ? उसी सफेद बुकनी से मैंने तुम्हारे भाइयों को अदृश्य किया था। उसी लाल अञ्जन से मैंने तुम्हारा हाथ गायब कर दिया था।" दाढ़ी वाले बौने ने हँसते हुए जवाब दिया। "तो फिर यह तौलिया किस काम आता है !" उदय ने पूछा। "उसके दो उपयोग है। एक तो तुम उसे बिछा कर जिस तरह का खाना चाहो तुरन्त उस पर आ जाएगा। दूसरे वह किसी भी तरह की बीमारी क्यों न हो, दूर कर देगा।" दाढ़ी वाले ने बताया। "तब हम तीनों को जो दृष्टि दोष है क्या उसे तौलिया दूर कर सकता है ?" उदय ने फिर पूछा। "दृष्टि-दोष ! कैसा दृष्टि-दोष ?" बोने ने अचरज के साथ पूछा। तब उदय ने बताया कि उसे रात में नहीं दिखाई देता और निशीथ को रात और प्रदोष को दोनों साँझ के अलावा किसी वक्त नहीं दिखाई

देता। तब सारी बात बौने की समझ में आ गई। उसने कहा-"अच्छा, तुम लोगों को ऐसा उपाय बता दूँगा जिससे सारा इष्टि-दोष दूर हो जाए। लेकिन पहले मेरी माला मुझे दे दो।"

लेकिन उदय वैसा बेवक़ूफ़ नहीं था। उसे मालूम था कि वह एक बार पौने के चंगुल में फँस जाएगा तो फिर छुटकारा नहीं मिलेगा। इसलिए उसने चालाकी के साथ कहा-"पहले हमें वह उपाय बता दो जिससे हमारा दृष्टि-दोष दूर हो जाए ! इसके अलावा हम और कुछ नहीं चाहते।

तुम हमें वह उपाय बता दोगे तो इस माला को हम यहाँ से पश्चिम की ओर, दस मील की दूरी पर जो एक खोह है, उसमें रख कर चले जायेंगे। तुम हमारे पीछे पीछे आकर उस को उठा लेना।" उस माला के बिना बौने का काम नहीं चल सकता था। इसलिए लाचार होकर उसे उदय की बात माननी पड़ी।

इतने में निशीथ और प्रदोष ने कहा- "भैया ! इसके कारण अब तक हमें भूखा ही रहना पड़ा। पेट में चूहे दौड़ रहे हैं ! निकालो न वह तौलिया ! जरा उसकी परीक्षा हो जाए।" सच पूछा जाय तो उदय को उस तौलिए की बात याद न थी। भाई की बात सुनते ही उदय ने तरह तरह की खाने की चीज़ों को मन में याद किया और तौलिया जमीन पर बिछाया। तुरन्त उसकी याद की हुई चीजें तौलिए पर आ गई। तीनों भाइयों ने खूब छक कर खाया। लेकिन तौलिए पर की चीजें ज्यों की त्यों रहीं। उन्होंने दाढ़ी वाले को भी न्यौता दिया। उसने भी भर पेट खाया। इस तरह पेट भरने के बाद उदय ने तौलिया उठा कर जेब में रख लिया और दाढ़ी वाले से कहा-"अब हमें वह उपाय बता दो जिससे हमारी आँखें चङ्गी हो जाएँ। क्योंकि हमें जल्दी ही अपनी राह पकड़नी है। तब दाढ़ी वाले ने कहा-"तुम्हारे पास जो लाल अञ्जन है उसकी एक गोली बना लो। उस गोली को सन के रेशों से लपेट कर सुलगा दो। उससे खूब धुआँ निकलने लगेगा। तब तुम तीनों भाई इस तौलिए को सिर पर ओढ़ कर इस तरह बैठ जाओ जिससे धुआँ सीधे तुम लोगों की आँखों में चला जाए। पाँच मिनट उस तरह

बैठे रहो। बस, आँखें चङ्गी हो जाएँगी। तब उदय ने उसके कहने के मुताबिक गोली बना कर उसे सन के रेशों से लपेटा। लेकिन आग कहाँ मिले ? उदय सोच ही रहा था कि क्या करना चाहिए। इतने में दाड़ी वाले ने कहीं से आग लाकर उसको सुलगा दिया। तुरन्त उसमें से इतना धुआँ निकलने लगा कि मालूम पड़ता था, गाँव के गाँव जले जा रहे हों। तब उदय और उसके भाई आग को घेर कर बैठ गए और तौलिया अपने सिर पर ओढ़ लिया। धुआँ सीधे उनकी आँखों में लगने लगा। पाँच मिनट बाद वे वहाँ से हट गए। एक एक की आँखों से झरनों की तरह आँसू बह रहे थे।

कुछ देर बाद आँसू बन्द हो गए तो तीनों भाइयों ने अपनी आँखें खोलीं। आश्चर्य ! कहाँ उन्होंने सोचा था कि उनकी आँखें चङ्गी हो जाएँगी। लेकिन इसके बदले आँखें ही गायब हो गई थी। दाढ़ी वाले की सलाह का कैसा फल हुआ। यह देख कर उदय क्रोध से जलने

लगा। उसने कहा-"अरे दुष्ट! क्या तूने हमें यह सलाह इसीलिए दी थी !" तब दाढ़ी बाले ने कहा-"भाई! बिना सोचे-समझे गुस्सा न करो ! अगर मैं तुम्हें धोखा देना चाहता तो अपने सब रहस्य क्यों बतलाता ? सुनो! अभी काम पूरा नहीं हुआ है। अब जरा अपनी जेब से हरे अञ्जन की डिबिया निकालो और वह अञ्जन आँखों पर लगा कर देखो तो। क्या होता है ?" तब उदय ने हरे अञ्जन की डिबिया निकाल कर अपने और अपने भाइयों की आँखों पर लगा लिया। तुरन्त तीनों की आँखें चङ्गी हो गई और उन्हें साफ साफ दिखाई देने लगा। तब उदय बहुत लज्जित हुआ कि उसने दाढ़ी वाले पर नाहक गुस्सा किया। निशीथ और प्रदोष जिनको रात में और सन्ध्या के सिवा और वक्त नहीं दिखाई देता था, अब दिन में भी देखने लगे।

उनकी खुशी का ठिकाना न रहा। तब तीनों अपने घोड़ों को के आने ले आने के लिए चले। तीनों अखिर उस पेड़ के पास पहुँचे जिससे उनके घोड़े पहले बँधे हुए थे। उदय ने अपनी जेब से काली बुकनी निकाल कर उस जगह छिड़क दी। तुरन्त दोनों घोड़े दिखाई देने लगे। वहाँ से उन्होंने खोह में जाकर तीसरा घोड़ा भी ले लिया और दाढ़ी वाले के घर लौट आए। उन्हें देख कर दाढ़ी वाले ने कहा-"मैंने जो वादा किया था वह पूरा हो गया न। अब तुम लोग जा सकते हो। हाँ, अपने वादे के अनुसार माला खोह में छोड़ते जाना। लेकिन तुम लोगों ने अपना वादा पूरा नहीं किया तो....." और भी कुछ कहने जा रहा था कि निशीथ ने टोक कर पूछा- "पहले हमें यह बताओ कि तुम

असल में कौन हो ! हम तुम्हारा सच्चा परिचय पाए बिना यहाँ से नहीं जा सकते।" तब दाढ़ी वाले ने कहा- "मैं यह तो तुम्हें नहीं बता सकता। क्योंकि यह एक बड़ा रहस्य है। अगर में तुम्हें यह रहस्य बताऊँगा तो मेरा सिर सौ टूक हो जाएगा और मैं मर जाऊँगा। यह किसी का शाप है। इसलिए मुझे माफ करो।"

तीनों भाइयों ने उसकी बात मान ली और परिचय के लिए विशेष आग्रह नहीं किया। वे अपने घोड़ों पर सवार होकर वहाँ से निकले। जाते समय उदय ने दाढ़ी वाले से कहा-"हमारी और एक इच्छा है। क्या तुम उसे पूरी करोगे ? हम तुम्हारी माला महीं छोड़ जाएँगे। लेकिन अञ्जन, तौलिया वगैरह अपने साथ लेते जाएँगे।" बौने ने उनकी मात मान ली। तीनों भाई यहाँ से चल कर जाते जाते दाढ़ी वाले की बताई हुई खोह के नजदीक पहुँचे। वादे के अनुसार उदय ने गले की माला उतार कर खोह में धर दी। माला गले से निकालते ही उदय का पहले का सा रूप हो गया। अपने घोड़ों पर सवार होकर तीनों आगे

बढ़ चले। थोड़ी दूर जाने के बाद वे एक पने जङ्गल में पहुँचे। तब तक अन्धेरा हो गया था। रात को वे जङ्गल में कहाँ ठहरते ? वे सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए।

इतने में तीन शेर कहाँ से गरजते हुए आए और उन पर टूट पड़े। इस तरह अचानक टूट पढ़ने के कारण निशीथ और प्रदोष कुछ क्षण तक स्तब्ध रह गए। लेकिन उदय ने अपनी जेब से सफेद बुकनी निकाल कर अपने दोनों भाइयों और उनके घोड़ों पर भी छिड़क दी। फिर थोड़ी सी बुकनी अपने ऊपर

छिड़क ली। तुरन्त सभी गायब हो गए। शेर जब गरजते हुए टूट पड़े तो यहाँ क्या था ? कुछ नहीं। शेर बड़ी आशा लगाए आए थे कि अब उनको पेट भरने का मौका मिला। लेकिन उन्हें निराश होकर जाना पड़ा। थोड़ी देर में में वहाँ से चले गए। शेरों के चले जाने के बाद भी भाइयों ने अपना मामूली रूप धारण नहीं किया। क्योंकि उन्होंने सोचा कि जङ्गल में रात के वक्त खतरा ज्यादा रहता है। इसलिए सबेरे तक वे उसी अदृश्य रूप में ही रहे। आखिर सबेरा हुआ। उदय ने अपनी जेब से काली बुकनी निकाल कर अपने भाइयों और अपने ऊपर छिड़क ली। तुरन्त तीनों के असली रूप हो गए। तब तीनों अपने घोड़ों पर सवार होकर थोड़ी देर में हवा से बातें करने लगे। दाढ़ी वाले की कृपा से अब उनकी दृष्टि में कोई दोष नहीं रह गया था। उस ओर से अब उन्हें कोई चिन्ता न थी। इस तरह कुछ दूर जाने के बाद उन्हें एक निर्जन प्रदेश में एक महल दिखाई दिया। "देखें! हम तीनों में से कौन पहले उस महल के नजदीक पहुँचता है।" यह कह कर तीनों ने घोड़ों को ऐंड लगाई। उदय कुछ आगे निकल गया। निशीथ और प्रदोष के बीच कोई अन्तर न था। दोनों पीछे थोड़ी दूर पर आ रहे थे। अचानक उन्होंने देखा कि उनके आगे जाने वाला उदय न जाने कैसे, अदृश्य हो गया।

[उदय को क्या हो गया? क्या इस महल मे और उसके गायब हो जाने में कोई ताल्लुक था ? तीनों भाई फिर मिलेंगे कि नहीं ? आदि प्रश्नों के उत्तर अगले अङ्क में पाइए।]
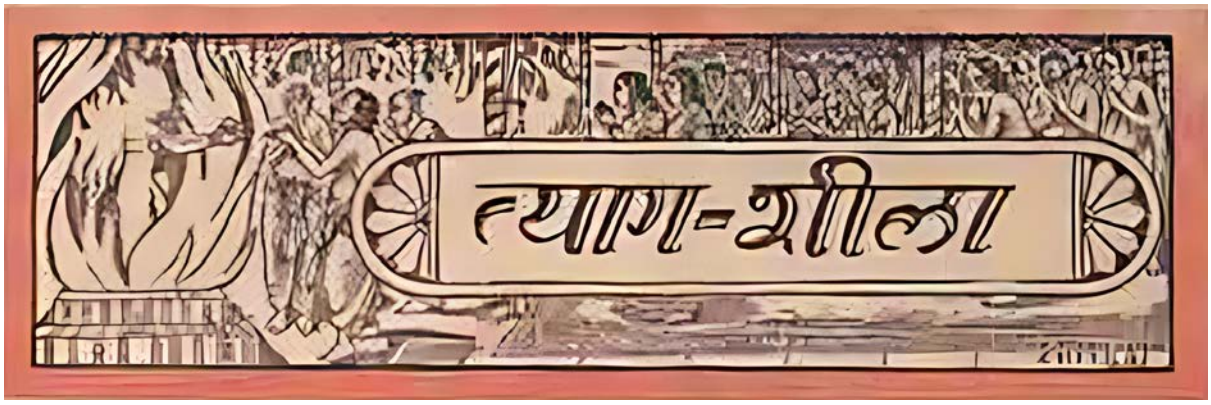
गोदावरी-तीर के एक गाँव में ज्यादातर वैश्य लोगों के घर थे। उन में कुसुम सेठ सबसे धनवान, दानी और सज्जन पुरुष थे। उनकी श्री कुसुम बाई भी धर्म-कर्म में बहुत श्रद्धा रखती थी। इस कारण से उन दंपति के प्रति सभी वैश्य बड़ा आदर भाव रखते थे। कुसुम सेठ को किसी चीज की कमी न थी; लेकिन सन्तान के अभाव से वे बहुत चिन्तित रहते थे। सन्तान के लिये पति-पत्नी ने बहुत से पूजा-पाठ किए, अनेकों तीर्थों की यात्रा की। लेकिन कोई फायदा न हुआ। आखिर पण्डितों-पुरोहितों ने उस सेठ को सलाह दी कि अगर तुम पुत्र कामेष्ठी यज्ञ करोगे तो तुम्हारी इच्छा अवश्य पूर्ण होगी। उनकी सलाह के अनुसार सेठ ने तुरन्त यज्ञ की तैयारियों शुरू कर दीं। अत्यन्त भक्ति-भाव के साथ जब उन लोगों ने यज्ञ पूरा किया तो हवनकुण्ड में से अनि-देव ने प्रत्यक्ष होकर कुछ फल दिए। उन फलों को कुसुम बाई ने बड़े प्रेम से खाया। कुछ ही दिनों में वह गर्भवती हो गई। और कुछ दिन बाद देवी की कृपा से उसकी कोख से दो अत्यन्त सुन्दर जुड़वें बच्चे पैदा हुए। उनमें से एक लड़का था और एक लड़की। लड़की का वासवाबिका और लड़के का विरूपाक्ष नाम रख कर माँ-बाप उन दोनों को बड़े लड़-प्यार से पालने लगे। देवता के वर प्रभाव से पैदा होने के कारण वे दोनों बच्चे कुछ ही दिनों में सब विद्याएँ सीख कर बड़े हो गये। उन दिनों बेंगी देश पर विष्णुवर्धन विमलादित्य

का राज था। तब बेंगी देश की राजधानी थी राजमन्दी। एक बार इस बिमलादित्य ने कलिङ्ग देश पर चढ़ाई करके उसे जीत लिया। लेकिन कुछ दिन बाद कलिङ्ग राज ने फिर सेना एकत्र करके लड़ाई की और विमलादित्य को हराया। इन लड़ाइयों के कारण उस समय बेंगी देश में बहुत उत्पात होते लगे। जगह जगह बगावत हो रही थी। उन बागियों को दबाने के लिए विमलादित्य अपने सामन्त कुख्य-वर्मा, सेनापति नृपकाय और अमात्य बिज्जी को साथ लेकर राज में घूमने लगे। घूमते घूमते एक बार उन्होंने कुसुम सेठ के गाँव के नज़दीक डेरा डाला। राजा को आया सुन कर गाँव के वैश्यों ने उनके दर्शनों के लिए तैयारी की और अनेक सत्कार करके अपने गाँव में उनका स्वागत किया। वे सभी बहुत धनवान थे। इसलिये उनके स्वागत का कहना ही क्या था !उन्होंने गाँव में बड़ी धूम-धाम से राजा का जुलूस निकाला। जुलूस चारों ओर घूम कर गाँव के चौपाल पर पहुँचा। वहाँ वैश्य-रमणियों ने बड़ी सज-धज के साथ महाराज की आरती उतारी।

उनके सत्कार से विमलादित्य को बहुत आनन्द हुआ। उन्होंने कहा-"हम इस गाँव की पतिब्रताओं का गौरव करने के ख्याल से उनमें सर्व-सम्मानित महिला को एक पान का बीड़ा देना चाहते हैं। अब आप ही बताएँ, यह बीड़ा किसको दिया जाय। तब एक बूढ़ी औरत ने उठ कर कहा-"हुजूर, देवी कुसुम बाई ही हमारे कुल की रमणियों में सबसे

श्रेष्ठ है। इसलिये पहले उसे ही बीड़ा दीजिए। यह कह कर उसने कुसुम बाई की ओर इशारा किया। राजा के आज्ञानुसार बीड़ा लेने के लिए कुसुम बाई आगे बढ़ी। राजा उसको बीड़ा दे रहे थे कि इतने में उनकी नज़र बगल में खड़ी वासवी पर पड़ी। उसका रूप देखते ही वे मुग्ध हो गए। राजा ने अपने खेमे में लौटने के बाद मन्त्री द्वारा कुसुम सेठ को खबर भेजी कि वे वासवी को अपनी रानी बनाना चाहते हैं। यह खबर सुनते ही कुसुम सेठ पर मानों बिबली टूट पड़ी। उसने कहा-"राजा क्षत्रिय हैं और हम वैश्य। हम दोनों के बीच शादी ब्याह कैसे हो सकता है ! हमारे कुल के लोग ऐसी बात कैसे मानेंगे ?वे राजा हैं तो हम उनकी सन्तान हैं। ऐसी बुरी भावना उनके मन में कैसे पैदा हुई।" यह सुन कर मन्त्री ने क्रुद्ध होकर कहा-"सेठ ! तुम राजाज्ञा को क्या समझते हो ! सोच-विचार लो। तुम इनकार करोगे तो वे तुम्हारा गाँव लूट कर

जबरदस्ती तुम्हारी लड़की को छीन ले जा सकते हैं। अच्छी तरह सोच लो।" यह कह कर वे चले गए। यह खबर बिजली की तरह सारे गाँव में फैल गई। वैश्य लोग सब एक जगह जमा हुए।

"हम नहीं जानते थे कि राजा इतना दुष्ट है। हमने उसे गाँव में क्या बुलाया कि अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारी। बड़ा कृतघ्न मालूम होता है यह राजा !" उन्होंने सोचा। आखिर उन्होंने राजा के पास खबर भेजी कि कुल-धर्म का अतिक्रमण करना अच्छा नहीं। लेकिन

राजा ने इसकी कुछ परवाह नहीं की। आखिर राजा से डर कर उस गाँव के बैश्यों ने झूठ-मूठ की स्वीकृति दे दी और अपने सिर की बला टाली। ब्याह की तैयारियों के लिये उन्होंने कुछ समय माँगा और किसी तरह राजा को उस गाँव से भेज दिया। राजा के जाने के बाद कुसुम सेठ ने दूर दूर के गाँवों में रहने वाले अपने सभी रिश्तेदारों को बुलाया। सारी हालत उन्हें बताने के बाद उसने पूछा कि अब क्या किया जाय ! तीब्र वाद-विवाद होने लगे। उनमें से कुछ ने सीधे राजमन्त्री में राजा के पास जाकर उनसे विनती की-"महाराज ! वैश्यों और क्षत्रियों के बीच विवाह धर्म विरुद्ध है। यह किसी ने आज तक न देखा, न सुना। इसलिए हुजूर कृपा करके अपना निश्चय बदल डालें।" लेकिन मूर्ख के जिद्दी मन को कौन बदल सकता है। राजा ने त्यौरियाँ चढ़ा कर कहा-"हमारा हुक्म टाला नहीं जा सकता। हमारी बात नहीं मानोगे तो तुम्हारे कुल का समूल नाश होगा।" यह कह कर उसने कुछ सिपाहियों को कुमुम सेठ के गाँव पर पहरा देने के लिये भेज दिया। यह गड़बड़ी देख कर वैश्यों के सभी मुखिया घर-बार छोड़ कर, जान मुट्ठी में लेकर भाग गए। लेकिन कुछ लोग जो साहसी थे, वहीं रह गये और देखने लगे कि अब राजा क्या करता है। इस हालत में वासवी ने अपने पिता के पास आकर कहा-"पिताजी! आप मेरे बारे में कुछ भी चिन्ता न कीजिए। आप यह न सोचिए कि मेरे कारण आपके वंश या परिवार पर कलङ्क का टीका लगेगा।

अभी राजा को खबर दीजिए कि हम इस विवाह के लिए राजी हैं और जल्दी बारात लेकर आप आ जाइए। पिता ने उसकी बात अचरज के साथ सुनी। लेकिन यह नहीं पूछा कि तुम ऐसा क्यों कर रही हो। उसे अपनी लड़की पर पूर्ण विश्वास था। दूसरे दिन कुसुम सेठ ने राजा के पास खबर भेज दी कि वह राजी है।

व्याह का दिन ठीक हो गया। गाँव में एक विवाह मण्डप बनाया गया। चारों ओर खेमे गड़ गए। सज धज का तो कहना ही क्या था ? सब जगह मोतियों की झालरें लटक रही थीं। बन्दनवार झूल रहे थे। उस मण्डप के बीचों-बीच हवन-कुण्ड बनाया गया। उस सजे हुए मण्डप में राजा के असंख्य परिजन और अमूल्य वस्त्र पहने हुए बन्धुबान्धव बैठे हुए थे। उस दिन वासवी ने अभ्यञ्जन-स्नान करके सिन्दूरी रङ्ग की साड़ी पहन ली थी। मुख पर तिलक लगा था। बदन पर चन्दन का लेप था। बाद्य-यन्त्रों के कोलाहल के बीच वह मण्डप के पास आ खड़ी हुई। सब लोग राजा से वासवी के विवाह की बात सुनकर चकित हो रहे थे। किसी को नहीं मालूम था कि वह मन में क्या सोच रही है। यहाँ तक कि उसके माता-पिता भी उसके मन की बात नहीं जान सके थे। फिर दूसरों का कहना ही क्या ?

आखिर राजा भी दरबारियों के साथ मण्डप में पधारे। वहाँ की सजावट देख कर उन्हें बहुत खुशी हुई। इतने में वासवी ने राजा के पास जाकर कहा-"राजन्! हमारे कुल का आचार है कि बर

और बधू तीन बार हवनकुण्ड की प्रदक्षिणा करके, तब देवता के मन्दिर में जाकर व्याह करते हैं।" राजा ने बड़ी खुशी से उसकी बात मान ली। वासवी ने अपने माता-पिता, गुरुजनों और ब्राम्हणों को नमस्कार किया। राजा जागे-जागे और वह पीछे-पीछे प्रदक्षिणा करने लगे। बाजे-गाजों का कोलाहल आसमान में गूञ्जने लगा। एक प्रदक्षिणा हुई। दूसरी भी हो गई। लेकिन तीसरी पूरी होने के पहले ही धू-धू करके जलती हुई आग में वासवी कूद पडी। अग्नि-देवता प्रत्यक्ष हुए और अपनी लाड़ली बिटिया को फिर अपनी गोदी में उठा ले गए। हजारों लोग एकटक उत्सुकता के साथ तमाशा देख रहे थे। वे हठात् फूट-फूट कर रोने लगे।

उनका शोक देख कर विमलादित्य ने सोचा-"अब खैर नहीं।" उसने वहाँ से भाग कर जान बचाने की कोशिश की। लेकिन देवी के शाप से राह में ही उसका सिर टूक टूक हो गया। अपनी प्यारी बेटी के शोक में कुसुम सेठ और उसकी पत्नी ने भी जलती लपटों में कूदकर जान दे दी। इस भयङ्कर दुर्घटना से विचलित होकर वैश्यों के अभिमानी मुखियाओं ने भी वासवी का ही अनुसरण किया। इस तरह कुल-गौरव की रक्षा के लिए प्राण-त्याग करके वासवी ने वैश्य-कुल के यश को उज्वल कर दिया। इसलिए उस दिन से वह उनकी कुल देवी बन गई। बासवी कन्यका परमेश्वरी के नाम से आज भी जगह जगह उसी की उपासना होती है।

बलभद्रपूर में परसू नाम का एक गुड़ का व्यापारी रहता था। नाम तो धरमू था लेकिन था वह बड़ा कञ्जूस। हाँ, उसकी पत्नी बड़ी पतिव्रता थी। वह भिखमंगों को भीख दिए बिना नहीं लौटाती थी। उसके मुँह से कमी 'नहीं' न निकलता था। "जितने लोग आते हैं सबको भीख दोगी तो थोड़े ही दिन में हमारा दिवाला निकल जाएगा।" धरमू अपनी पत्नी से कहता। "नहीं; भिखमंगों को भीख देने से हमारे घर की सम्पदा और भी बढ़ेगी।" उसकी पत्नी जवाब देती। इस तरह दोनों के बीच हमेशा चख-चख चलती रहती थी। आखिर किसी तरह दोनों के बीच एक समझौता हुआ। उसके अनुसार धरमू की पत्नी को रोज एक भिखमंगे को एक मुठ्ठी भर ही चावल देना था। इससे ज्यादा नहीं दे सकती थी। धरमू की स्त्री ने सोचा-"चलो कम से कम एक को भीख देने की इजाजत तो मिल गई।"

दूसरे दिन से वह मुट्ठी में अच्छी तरह चावल भर कर एक ही भिखमंगे को देने लगी। वह चावल कम से कम पाव सेर होते। वह मन में यह सोच कर सन्तोष कर लेती कि चलो, एक गरीब तो आज खाली पेट नहीं रहेगा। यों कुछ दिन बीत गए। धरमू की बहू ससुराल आ गई। उसकी उम्र ज्यादा न थी। उसे देखते ही धरमू को एक बात सूझी। उसने पत्नी को पुकार कर कहा-"अजी ! जरा इधर तो आना। हाँ ; आज से बहू को ही भीख देने का काम सौंप

चन्द्राणी देवी

दो। नन्हें हाथों से नई वहू को भीख डालते देख कर मिखमंगों को भी खुशी होगी और लोग भी उसकी बड़ाई करेंगे।" धरमू की यह बात सुन कर उसकी पत्नी को बहुत खुशी हुई। बेचारी को भान भी न हुआ कि उसकी बातों में कौन सी चाल छिपी थी। उसकी बुद्धि इतनी दूर जाती भी न थी। इतने में गुड़ का सौदा करने के लिए धरमू को गाँव से बाहर जाना पड़ा। ससुर की इच्छा के अनुसार ही वहू दूसरे दिन से भीख डालने लगी। लेकिन भीख डालने के बारे में सास और ससुर में जो समझौता हुआ था उसका पता उसे नहीं था। इसलिए वह बोरा खोलकर बैठ जाती और जितने लोग आते सबको भीख देती जाती थी।

अब आपके मन में शक उठेगा कि लोभी घरमू ने वहू को भीख देने को क्यों कहा ! क्या उसका मन बदल गया था। नहीं; इसमें एक रहस्य छिपा हुआ था। घरमू की पत्नी के हाथ बड़े बड़े थे। तिस पर वह मुट्ठी भर कर भीख देती थी। इसलिए एक आदमी को भीख देने पर पाव सेर चावल चला जाता था। हाँ, धरमू ने सोचा कि इसके हाथों से भीख देने का काम छुड़ाया जाय तो चावल की बचत होगी। वह सोचने लगा कि वह कैसे होगा ? बहू के आते ही धरमू की सारी चिन्ता दूर हो गई। क्योंकि बहू छोटी थी। उसके हाथ नन्हे से थे। उसकी मुट्ठी में पाव सेर चावल कभी न आते। इस तरह बड़ी बचत होती थी। यही सोच कर धरमू

ने अपनी पत्नी को सुझाया कि भीख देने का काम बहू को सौंप दिया जाय। उसकी भोली-भाली पत्नी ने तुरन्त उसकी बात मान ली थी। धरमू को बड़ी खुशी हुई कि उसकी पत्नी ने उसकी बात मान ली। लेकिन इस खुशी में गाँव से बाहर जाते बक्त वह वहू से यह कहना मूल ही गया कि रोज एक ही भिखमंगे को भीख देनी होगी। बेचारी वह क्या जाने कि उसके ससुर कैसे कञ्जूस हैं। इसलिए वह जितने भिखमंगे आए, सबको अपने नन्हे हाथों से भीख देती गई। धरमू के घर भीख देने के नियम में यह परिवर्तन देख कर सिर्फ उसी गाँव के नहीं, आम-पड़ोस के गाँवों के भिखमंगे भी उस घर के सामने कतार बाँध कर खड़े होने लगे। तीन चार दिन बाद धरमू काम पूरा करके घर लौट आया। आते ही उसने देखा कि घर के सामने भिखमंगे कतार बाँध कर खड़े हैं। वे उसकी बहू के गुण गा रहे हैं और उसकी बहू सबको भीख देती जाती है। यह देखते ही लोभी धरमू का कलेजा फट गया। देखने पर मालूम हुआ कि एक अनाज

खाली हो गया है। अब पछताने से क्या फायदा था ? उसने सोचा-"भीख देने का काम मैंने ही वहू को सौंप दिया था। अब उससे कैसे कहूँ कि तुम भीख न दो ! क्या सब लोग मेरी हँसी उड़ाने न लगेंगे ? कुछ ही दिनों में घर की बहू की बडाई आस-पास के सब गाँवों में होने लगी। यह सुन कर धरमू मन ही मन और भी कुढ़ने लगा। उसने सोचा-"घर लुटता है मेरा और बड़ाई होती है उसकी ! अगर यह दान-पुण्य मेरे हाथों होता तो कम से कम मेरी बड़ाई तो होती। लेकिन तब से धरमू की पत्नी का मन बहुत प्रसन्न रहने लगा।

तीन

किसी महाराज के यहाँ एक मन्त्री था जो बहुत उदार स्वभाव का था। वह नित्य अन्न-दान करता था। देश-विदेश से ब्राह्मण आकर रोज उसके घर भोजन किया करते थे। रोज कितने लोग आते थे, कितने लोग जाते थे, कितने लोग उसके यहाँ भोजन करते थे इसका पता किसी को न था। यहाँ तक कि खुद मन्त्री भी नहीं जानता था। एक दिन एक ब्राह्मण की ओर मन्त्री का ध्यान गया जो दो तीन रोज से उसे दिखाई पड़ रहा था। "आप किस गाँव के हैं ?" मन्त्री ने उससे पूछा। "वया आप मुझे नहीं जानते ? मैं आपका मौसेरा भाई हूँ।" उस त्राह्मण ने आश्चर्य के साथ जवाब दिया। मन्त्री को और भी अचरज हुआ। उसने मन में सोचा- "मैंने तो कभी नहीं सुना कि मेरे कोई मौसी भी है। फिर ये महाशय, मेरे मौसेरे भाई कहाँ से निकल आए। मन्त्री को स्तब्ध देख कर ब्राह्मण ने मुसकुराते हुए कहा- "मन्त्री जी ! क्या आप ऊँचे पद पर पहुँचते ही अपने रिश्ते-नाते भी भूल गए ! मैं याद दिलाता हूँ। मेरी और आपकी माताएँ सगी बहनें हैं। बड़ी बहन ज्येष्ठा देवी (निर्धनता की देवी) का प्रिय पुत्र मैं हूँ। छोटी बहन लक्ष्मी देवी के प्रिय पुत्र आप हैं। आपकी माता के लच्छन आप में दिखाई देते हैं और मेरी माता के मुझमें। हम दोनों के भोग भाग्य में अन्तर आ गया। लेकिन वास्तव में है हम एक ही परिवार के। मौसेरा भाई होने के नाते मैं आपसे मदद माँगने आया हूँ।" ब्राम्हण की समय-स्फूर्ति से खुश होकर मन्त्री ने उसे एक नौकरी दिला दी। अब सुख से दिन बिताने लगा।

चार

किसी समय एक बड़ा व्यापारी था। उसने एक बार विदेश जाते वक़्त घर में सबसे पूछा कि-"तुम लोगों के लिए क्या क्या लाऊँ ?" तब सब लोगों ने अपनी अपनी इच्छा बता दी। तब उसने अपने तोते से जिसे उसने हाल ही से पालना शुरू किया था, पूछा कि तुम्हें क्या चाहिए। तब तोते ने कहा- "मैं जिस जङ्गल में पकड़ा गया था, वहाँ एक बड़ा पीपल का पेड़ है। उस पर बहुत से तोते रहते हैं। तुम उनसे जाकर कहना कि तुम जैसा ही एक तोता मेरे पास भी है और उसने यह बात तुम से बताने को कहा है। वे जो जवाब देंगे, वह तुम लौट कर मुझे बताना। इसके सिवा मुझे कुछ नहीं चाहिए। दूसरे दिन ब्यापारी रवाना हुआ। छः महीने में अपना काम पूरा करके वह तोते के बताए हुए जङ्गल में पीपल के पेड़ के पास गया और बोला -"तोतो ! तुम जैसा ही एक तोता मेरे पास भी है। यह बात उसने तुमसे बताने को कहा है।" उसकी बात सुनते ही एक तोते ने पंख फड़फड़ाते हुए नीचे गिर कर प्राण दे दिए। बाकी तोते उड़ गए। व्यापारी ने लौट कर अपने घर के तोते से यह हाल सुनाया। तुरन्त उसने भी प्राण छोड़ दिए। व्यापारी ने दुखी होकर पिञ्जड़े के द्वार खोल दिए और उस तोते को बाहर रख दिया। तुरन्त वह पंख फड़फड़ा कर उड़ा और सामने के पेड़ की डाल पर जा बैठा। व्यापारी हक्का-बक्का रह गया। तोते ने उससे कहा-"है व्यापारी ! में मुक्त होना चाहता था। इसलिए मैंने अपने बन्धुओं के पास वह सन्देश भेजा था। उन्होंने तुम्हारे द्वारा मुक्ति पाने का उपाय बना दिया।" यह कह कर वह तोता उड़ गया।

महाराष्ट्र देश में पैठनपुर नाम के गाँव में एकनाथ नाम का लड़का रहता था। उस गाँव के नजदीक ही जगन्नाथ नाम के एक पण्डित रहते थे। उनके पास उपदेश पाने के लिए दूर दूर से लोग आया करते थे। एकनाथ ने भी उनके पास जाकर कहा-"भगवन! आप मुझे भी अपना चेला बना लें और मन्त्रोपदेश करें।" पण्डित जगन्नाथ ने एक बार उसे सिर से पैर तक देख कर कहा-"लड़के ! अभी तुम्हारी का ही क्या है ! जाओ ! बड़े होने के बाद जाना !" लेकिन एकनाथ यहाँ से टला नहीं। उसने कहा-"भगवन ! उपदेश के लिए बड़े होने की क्या जरूरत है ? बालक ध्रुव की कितनी उम्र थी ? क्या उसने भगवान को नहीं पाया?" यह कह कर वह बहुत मिन्नत करने लगा। "अच्छा, तो सुनो! जिसका चित्त एकाग्र नहीं होता उसको मन्त्रोपदेश नहीं दिया जाता। जब मुझे विश्वास हो जाएगा कि तुम्हारा चित्त एकाग्र हो गया तभी में तुम्हें मन्त्र दूँगा। इसी शर्त पर में तुम्हें अपना चेला बनाऊँगा।" लाचार होकर जगन्नाथ ने कहा।

"जैसी आपकी कृपा।" एकनाथ ने कहा। गुरु के घर में एक एक चेला एक एक काम करता था। एक दिन गुरु ने एकनाथ से कहा- "बेटा! तुम कमजोर हो। कड़ी मेहनत नहीं कर सकते। इसलिए मैं तुम्हें घर का हिसाब-किताब सौंपता हूँ।" उस दिन से एकनाथ उस घर का हिसाब लिखने लगा। इस तरह बरसों बीत गए। एक दिन एकनाथ के

विनय बेडेकर

हिसाब में एक पैसे का फरक पड़ गया। "यह पैसा कहाँ गया !" एकनाथ ने बहुत दिमाग लड़ाया। लेकिन उसे कुछ पता न चला। रात हो गई। मेहमान लोग खा-पी चुके। नौ बज गए। चेले भी खा-पीकर सो गए। लेकिन एकनाथ आमद-खर्च के बही खातों के पन्ने पलटता ही रहा।

आखिर बारह बज गए। किसी वजह से जगन्नाथ की नींद टूट गई। उन्होंने देखा कि दीए के सामने बैठ कर एकनाथ हिसाब देख रहा है। तब उनको याद आया कि भोजन के समय भी एकनाथ उन्हें कहीं न दिखाई दिया था। वे उसके पास जा खड़े हो गए। लेकिन एकनाथ इतना तल्लीन था कि उस को इसका पता ही न था। एक घण्टा और बीत गया। आखिर एकनाथ "हाँ, मिल गया !" कह कर आनन्द से उछल पड़ा। तब उसे पता चला कि गुरू जी सामने खड़े हैं। उसने चकित होकर पूछा- "भगवन ! आप यहाँ कितनी देर से खड़े हैं ?" "तुम इतने एकाग्र होकर

क्या खोज रहे थे ?" जगन्नाथ ने पूछा। "एक पैसा ! आज हमारे घर जो मेहमान आए थे उनमें से एक का चेला एक पैसा माँग कर ले गया था। मैं वह किताब में लिखना मूल गया था। अभी याद आ गया।" एकनाथ ने कहा। यह सुन कर जगन्नाथ का हृदय पिघल गया। उन्होंने पूछा-"तो तुम खाना-पीना सब भूल कर इतनी देर से एक पैसा खोज रहे थे!"

"हाँ। खाने-पीने और सोने की परवाह करूँगा तो काम कैसे

चलेगा ?" यह कह कर एकनाथ अपने कमरे में चला गया। उसी समय पण्डित जगन्नाथ ने एक निश्चय कर लिया। उन्होंने सोचा-"एक पैसे के लिए यह इतनी निष्ठा रखता है। अगर इसी एकाग्रता का भगवान के अन्वेषण में उपयोग किया जाय तो कितना अच्छा हो ! आज से इसको हिसाब-किताब में अपना समय नष्ट करने नहीं देना चाहिए।" दूसरे दिन उन्होंने एकनाथ को बुला कर कहा- "बेटा ! आज एक चाण्डाल इमारा मेहमान बन कर आएगा। अगर तुम सेवा सुश्रूषा करके उसके हृदय में घर कर सको तो वही तुम्हें तारक मन्त्र का उपदेश करेगा। तुम संशय न करो कि एक चाण्डाल मुझे मन्त्रोपदेश कैसे करेगा ? क्योंकि वह चाण्डाल ही मेरे गुरु दत्तात्रेय हैं। उनके साथ चार कुत्ते होंगे। वे ही चारों वेद हैं। आज तुम भी उनको अपना गुरू बना कर सदा के लिए मुक्त हो जाओ।"

"लेकिन भगवन ! मेरा हृदय तो आप के अर्पण हो चुका है। वह दूसरों की शरण कैसे लेगा ? इसलिए चाहे कुछ भी हो, मैं तो आपसे ही उपदेश लूँगा।" एकनाथ ने विनीत स्वर में कहा। भगवान दत्तात्रेय के आने के बाद जगन्नाथ ने उनकी सेवा करके सबेरे एकनाथ से उनकी जो बातचीत हुई थी, यह कह सुनाई। तब भगवान ने कहा-"जगन्नाथ। तुम्हारे शिष्य ने अन्य गुरुओं से उपदेश लेने से इन्कार कर दिया। इसमें बुराई कौन सी है ! तुम चिन्ता न करो। जिस तरह पेड़ की जड़ को सींचने से वह

बल सारे पेड को प्राप्त होता है, उसी तरह कोई भी तुम्हारी जो सेवा करेगा वह भी मुझे ही पाप्त होगी। तुम्हीं उसे मन्त्र का उपदेश दो। वह पड़ा भारी कवि बनेगा। तुम उसे आज्ञा दो कि वह अपनी कविता-शक्ति का उपयोग करके मराठी में वाल्मीकि जैसी एक रामायण लिखे।" इतना कह कर दत्तात्रेय अदृश्य हो गए। एकनाथ की आत्माभिलाषा पूरी हुई। पण्डित जगन्नाथ ने उसे मन्त्र का उपदेश दिया और कहा-"बेटा! अब तुम पैठनपुर लौट जाओ। अपने वृद्ध माता-पिता की सेवा करो और मराठी में एक रामायण रचो !"

गुरु के आज्ञानुसार एकनाथ पैठनपुर लौट गया और रामायण लिखने लगा। कुछ ही दिनों में वह रामायण के रस में तल्लीन हो गया। सीता-राम के बनवास के समय अयोध्यावासियों के साथ उसने भी आँसू बहाए। जङ्गल में लक्ष्मण के साथ साथ कन्दमूल की खोज में वह भी मटकता फिरा। सीता को जब
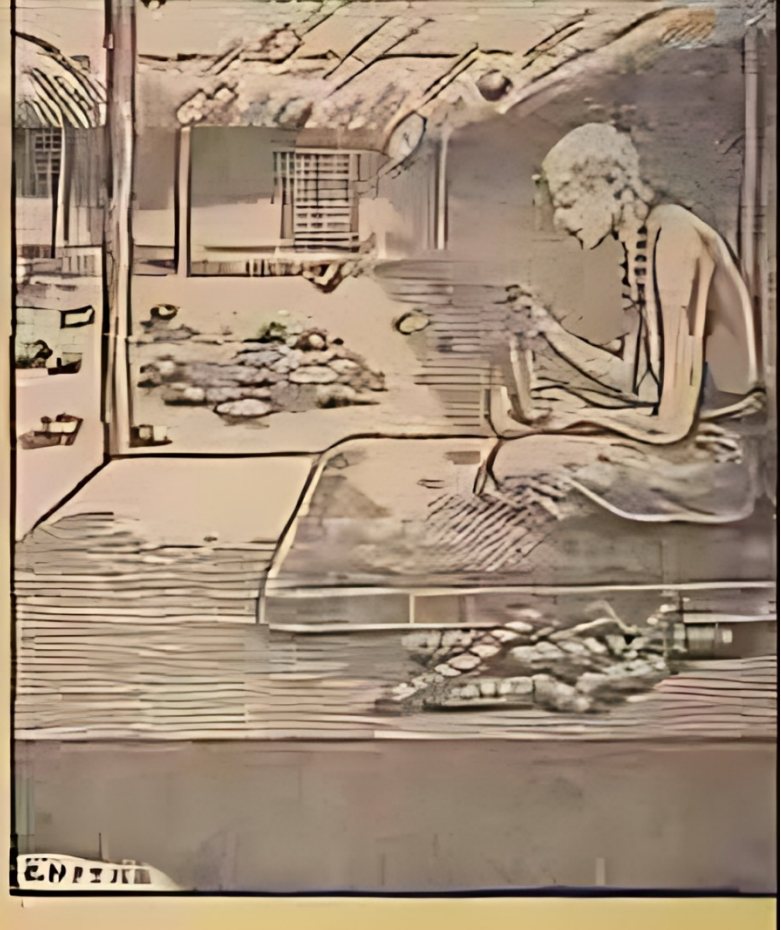
रावण उठा ले जाने लगा तो जटायु के साथ साथ उसने भी युद्ध किया।

इस तरह दुनिया से नाता तोड़ कर घर में बन्द रहने के कारण एकनाथ के बारे में तरह तरह की अफवाहें फैलने लगीं। लोग उससे जलने लगे। लोगों ने चाहा कि किसी तरह उसे बाहर निकाला जाए। इस उद्देश्य से कुछ लोगों ने उसका दरवाजा खटखटाया। लेकिन एकनाथ ने कुछ न सुना। कुछ लोगों ने पत्थर फेंके। कुछ लोगों ने हल्ला मचाया। लेकिन समाधि-मग्न योगी की तरह एकाग्र होकर रामायण लिखने

बाले एकनाथ को बाहरी दुनिया की कोई खबर न थी। आखिर सब लोग हार कर लौटना ही चाहते थे कि अचानक दीवार लाँघ कर ताड़ के पेड़ जितनी उचाई तक उछलकर एकनाथ उनके बीच आ गिरा। उसे देख कर सब लोग घबरा गए। उतनी ऊँचाई से गिरने के कारण एकनाथ एकदम बेहोश हो गया। लोग जो उसे कुढ़ाने आए थे, अपने मन का द्वेष भूल गए। अनेक उपचार करके एकनाथ को होश में ले आए। जब उसे अच्छी तरह होश आ गया तो उन्होंने पूछा-"बात क्या थी ! तुम क्यों उस तरह उछल पड़े ?" उनकी बात सुन कर एकनाथ ने चकित होकर पूछा-"मैं कहाँ उछला था ? उछलने वाले तो हनुमान थे। सागर लाँघ कर हनुमान जी अभी लेका में घुस गए हैं।" यह कह कर उसने अपने बाएँ हाथ का ताड़-पत्र दिखाया। उसमें क्या लिखा था ? उसमें सीता की खोज में हनुमान जी के सागर लाँघ कर लङ्का में प्रवेश करने का बृतान्त लिखा था। ठीक उसी समय जगन्नाथ अपने शिष्य से भेंट करने यहाँ आए।

सारा किस्सा सुनने के बाद उन्होंने कहा-"एकनाथ महाकवि है। वह अपने एक एक पात्र में लीन होकर काव्य लिख रहा है। इसलिए तुम लोग उसे नाहक दिक न करो। वास्तव में बड़े भाग्य से मुझे बह शिष्य मिला है। इसके द्वारा तुम सभी तर जाओगे !" उनकी बात सुन कर गाँव वालों को ज्ञानोदय हुआ। फिर एकनाथ को किसी ने दिक नहीं किया। इस तरह महाभक्त एकनाथ की रामायण से सारा महाराष्ट्र धन्य हो गया।

CHANDAMAMA (HINDI) DECEMBER 1951 REGD NO M 5452